इस सप्ताह के व्रत और पर्व

- **30** जुलाई को श्रीकल्कि जयंती
- **31** जुलाई को तुलसीदास जयंती
- **01** अगस्त को मासिक दुर्गा अष्टमी
- **4** अगस्त को सावन का अंतिम सोमवार
- **05** अगस्त को पुत्रदा एकादशी

सत्यम, शिवम, सुंदरम

- सावन माह अब समाप्ति की तरफ है। शिव पुराण के अनुसार भगवान शिव स्वयं ही जल हैं। जो जल सभी प्राणियों में जीवन शक्ति का संचार करता है, वह स्वयं उस परमात्मा शिव का रूप है। इसीलिए गंगाजल के अभिषेक से शिव की आराधना को उत्तम फल प्रदान करने वाला माना जाता है। इसी तरह शिव शब्द का अर्थ 'कल्याण' है। शिव की उपासना मनुष्य के जीवन में 'सत्य' को धारण करके, 'शिवम' अर्थात कल्याणकारी पथ की ओर अग्रसर करके हमारे जीवन को 'सुंदर' स्वरूप प्रदान करती है।

यूपी, उत्तरखंड में सावन के प्रमुख मेले

- सावन में अगर शिव भक्तों और कांवरियों की भारी भीड़ से सबसे बड़ा मेला अगर हरिद्वार में नजर आता है, तो काशी की छटा भी यहां लगने वाले मेले के कारण निराली ही रहती है। काशी विश्वनाथ को भगवान शिव का दूसरा घर माना जाता है। यहां मंदिर में झूला श्रृंगार देखने के लिए बड़ी संख्या में श्रद्धालु पहुंचते हैं। अयोध्या का सावन झूला मेला भी प्रदेश में बड़ी पहचान रखता है। यह मेला श्रावण मास के शुक्ल पक्ष के तीसरे दिन से शुरू होता है। लखनऊ में मोहान रोड स्थित ऐतिहासिक बुद्धेश्वर महादेव मंदिर में सावन के बुधवार पर मेला लगता है। अब यहां 30 जुलाई और 6 अगस्त को मेला रहेगा। आगरा में कालिंदी के किनारे पौराणिकता को समेटे कैलाश मंदिर का मेला भी अंग्रेजों के जमाने से आसपास काफी प्रसिद्ध है। इसे लक्खी मेला भी कहा जाता है, और स्थानीय स्तर पर अवकाश घोषित रहता है। लखीमपुर जिसे छोटी काशी भी कहा जाता है, यहां भी सावन भर मेला लगता है।

होइहि सोइ जो राम रचि राखा।
को करि तर्क बढ़ावै साखा॥
अस कहि लगे जपन हरिनामा।
गईं सती जहँ प्रभु सुखधामा॥

जो कुछ राम ने रच रखा है, वही होगा। तर्क करके कौन शाखा (विस्तार) बढ़ाए। (मन में) ऐसा कहकर भोलेनाथ श्री हरि का नाम जपने लगे और सती वहां गईं, जहां सुख के धाम प्रभु श्रीराम थे। यह दोहा गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरितमानस' में बालकांड का है। प्रसंग उस समय का है जब माता सती ने शिव की इस बात पर विश्वास नहीं किया कि श्रीराम ही परम ब्रह्म और ईश्वर हैं और उनकी परीक्षा लेने निकल पड़ीं। शिव जो विश्वास के प्रतीक हैं, सदा सत्य बोलने वाले, त्रिकालदर्शी, देवों के देव, ज्ञानी, योगी, और सती के पति हैं और माता सती जिन्हें सारा संसार सर्वोपरि पतिव्रता के रूप में पूजता है, वही अपने पति शिव के वचनों पर विश्वास नहीं कर पाईं, तब भोलेनाथ ने यह विचार किया कि श्रीराम ने कुछ और ही रचा है और जो कुछ श्रीराम ने रच रखा है, वही होगा।

पृथ्वी पर जीवन के देवता हैं पशुपतिनाथ

नेपाल की राजधानी काठमांडू में बागमती नदी के किनारे स्थित पशुपतिनाथ मंदिर भगवान शिव को समर्पित प्रसिद्ध हिंदू मंदिर है। पशुपति का अर्थ है, पशु मतलब 'जीवन' और पति का अर्थ है, 'स्वामी या मालिक'। इसी कारण पशुपतिनाथ को 'जीवन का देवता' या 'सभी प्राणियों का स्वामी' कहा जाता है।

ऐसी मान्यता है कि जो कोई भगवान पशुपतिनाथ के दर्शन करता है, उसका जन्म फिर कभी पशु योनि में नहीं होता है। इस मंदिर का इतिहास पूर्व वैदिक काल का माना जाता है। मंदिर की वास्तुकला में पैगोडा शैली और पारंपरिक नेपाली डिजाइनों का मिश्रण देखा जा सकता है। सुनहरी छत, लकड़ी की नक्काशी और पवित्र वातावरण इसे एक अद्वितीय, आध्यात्मिक और धार्मिक आभा प्रदान करता है। यह मंदिर खुले में होने वाले दाह संस्कार के लिए भी प्रसिद्ध है। काठमांडू (नेपाल) स्थित पशुपतिनाथ मंदिर दुनिया भर के हिंदू धर्मावलंबियों का प्रमुख तीर्थ स्थल है। ऐसी मान्यता है कि भगवान शंकर के देह स्थल केदारनाथ और मुख स्थल पशुपतिनाथ के दर्शन के बाद ही 12 ज्योतिर्लिंग के दर्शन का पुण्य लाभ प्राप्त होता है। पशुपतिनाथ मंदिर को नेपाल की धार्मिक, सांस्कृतिक विरासत के साथ आर्थिक विकास का बड़ा स्रोत माना जाता है। शिवालयों का महत्व आम तौर पर सावन और शिवरात्रि में काफी बढ़ जाता है, लेकिन पशुपतिनाथ मंदिर का दृश्य और वातावरण हर दिन खास होता है। यहां पूरे साल श्रद्धालुओं की भीड़ लगी रहती है। सावन भर श्रद्धालुओं का सैलाब उमड़ता है। इस बार सावन के प्रथम सोमवार को लाखों श्रद्धालु पहुंचे थे। भारत के कोने-कोने से लोग पहुंचकर पशुपतिनाथ का जलाभिषेक करते हैं।

चतुर्मुख लिंग के रूप में हुआ प्रकटीकरण

पौराणिक कथा के अनुसार भगवान शिव यहां पर चिंकारे का भेष धारण कर निद्रा में बैठे थे। बहुत खोजने के बाद वह देवताओं को मिले। देवताओं ने उन्हें वाराणसी ले जाने का बहुत प्रयास किया। इस दौरान बागमती नदी के दूसरे किनारे तक भागते हुए उनका सींग चार टुकड़ों में टूट गया। इसके बाद भगवान पशुपति चतुर्मुख लिंग के रूप में यहां प्रकट हुए थे। पशुपतिनाथ लिंग विग्रह में चार दिशाओं में चार मुख और ऊपरी भाग में पांचवां मुख है। प्रत्येक मुखाकार के दाएं हाथ में रुद्राक्ष की माला और बाएं हाथ में कमंडल है। प्रत्येक मुख अलग-अलग महत्व के हैं। इन सभी पांच मुखाकृतियों के पूजा का अलग-अलग महत्व है।

केदारनाथ का माना जाता है आधा भाग

- पशुपतिनाथ मंदिर के प्रकटीकरण का कोई इतिहास नहीं फिर भी इसका महत्व सर्वव्यापी और सर्वविदित है। मान्यता है कि यहां आदि काल से ही शिव की उपस्थिति है। पशुपतिनाथ को शिव के 12 ज्योतिर्लिंगों में से एक, केदारनाथ का आधा भाग माना जाता है।

अनवरत जारी रहता है दाह संस्कार

- पशुपतिनाथ मंदिर नेपाल की राजधानी काठमांडू से तीन किलोमीटर उत्तर-पश्चिम देवपाटन गांव में बागमती नदी के समीप स्थित है। इस नदी को मोक्षदायिनी कहा जाता है। मंदिर के पश्चिम और दक्षिण छोर पर हिंदुओं के शवों का अंतिम संस्कार होता है। यहां चिताओं का जलना अनवरत जारी रहता है।

अघोर, तत्पुरुष अर्धनारीश्वर सद्योजात और ईशान मुख

पशुपतिनाथ लिंग विग्रह में चारों दिशाओं में स्थापित चार मुखों में पहला 'अघोर' मुख है, जो दक्षिण दिशा की ओर है। पूर्व मुख को 'तत्पुरुष' कहते हैं। उत्तर मुख 'अर्धनारीश्वर' का रूप है। पश्चिमी मुख को 'सद्योजात' कहा जाता है। ऊपरी भाग 'ईशान' मुख के नाम से जाना जाता है। यह निराकार मुख है। यही भगवान पशुपतिनाथ का श्रेष्ठतम मुख माना जाता है।

रुद्राभिषेक का खास महत्व हर पूजा के लिए शुल्क

पशुपतिनाथ मंदिर में रुद्राभिषेक का खास महत्व है। पहले रुद्राभिषेक या और कोई पूजा कराने के लिए पुजारियों की दक्षिणा स्वैच्छिक थी। लेकिन अब मंदिर प्रशासन ने इसके लिए सेवा शुल्क तय कर दिया है। विशेष पूजा के लिए एक अलग प्रकोष्ठ बनाया गया है। यहां चढ़ावा या पूजा शुल्क का बड़ा हिस्सा मंदिर के रखरखाव, कर्मचारियों के वेतन पर भी खर्च होता है।

पशुपतिनाथ मंदिर में कोई वीआईपी दर्शनार्थी नहीं होता। नेपाल का बड़ा से बड़ा आदमी या राजनेता भी आ जाए तो आम श्रद्धालुओं के दर्शन में कोई व्यवधान नहीं होता। यहां तक कि राष्ट्रपति के आगमन पर भी मंदिर के भीतर सब कुछ सामान्य चलता रहता है।

दक्षिण भारतीय भट्ट पुजारियों की नियुक्ति की परंपरा

नेपाल के राजाओं ने 1747 से ही पशुपतिनाथ मंदिर में भगवान की सेवा के लिए भारतीय ब्राह्मणों को आमंत्रित किया था। सर्वप्रथम दक्षिण भारतीय ब्राह्मण को 'पशुपतिनाथ मंदिर' का प्रधान पुरोहित नियुक्त किया गया। दक्षिण भारतीय भट्ट ब्राह्मण ही इस मंदिर के प्रधान पुजारी नियुक्त होते रहे हैं, और इन्हें ही मंदिर के शिवलिंग को स्पर्श करने का अधिकार है। 2009 में माओवादियों ने पशुपतिनाथ मंदिर में घुसकर भारतीय पुजारियों का विरोध करते हुए उनके साथ दुर्व्यवहार किया था। लेकिन नेपाल की तत्कालीन सरकार ने सूझबूझ से इसे संभाल लिया था। मंदिर में भारतीय भट्ट पुजारियों के नियुक्ति की परंपरा लगातार कायम है।

लेखक : यशोदा श्रीवास्तव

लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। कई राष्ट्रीय स्तर के समाचार पत्रों और पत्रिकाओं से जुड़े रहे। भारत-नेपाल मामलों के जानकार हैं।

कुदरकोट से रुक्मिणी का हरण कर ले गए थे श्रीकृष्ण

कानपुर से करीब 90 किमी दूर स्थित है औरैया जिला। यहां बिधूना विकास खंड में एक गांव है, कुदरकोट। इसे कभी कुंदनपुर नाम से जाना जाता था। इस गांव की मान्यता द्वारिकाधीश श्रीकृष्ण की ससुराल के रूप में है। पौराणिक कथा के अनुसार कुंदनपुर के राजा भीष्मक की पुत्री रुक्मिणी का विवाह श्रीकृष्ण से हुआ था। श्रीमद्भागवत पुराण में आए उल्लेख के अनुसार लगभग पांच हजार वर्ष पूर्व कुंडिनपुर (मौजूदा कुदरकोट) में धर्मप्रिय राजा भीष्मक का शासन था। उनके पांच पुत्र रुक्मी, रुक्मरथ, रुक्मबाहु, रुक्मकेस तथा रुक्ममाली के अलावा एक पुत्री रुक्मिणी थी। भीष्मक के बेटे रुक्मी की मित्रता शिशुपाल से थी। इसके चलते वह अपनी बहन रुक्मिणी का विवाह शिशुपाल से कराना चाहता था। इसके विपरीत राजा भीष्मक व पुत्री रुक्मिणी की इच्छा श्रीकृष्ण से विवाह करने की थी। लेकिन राजा भीष्मक की अपने पुत्र रुक्मी के आगे नहीं चली, विवश होकर उन्होंने बेटी रुक्मिणी का विवाह शिशुपाल के साथ तय कर दिया, किंतु रुक्मिणी ने शिशुपाल के साथ शादी करने से इंकार कर दिया और द्वारका नगरी में श्रीकृष्ण के पास एक दूत भेजकर खुद को हरण करने का आग्रह किया। श्रीकृष्ण ने रुक्मिणी का संदेश स्वीकार कर लिया। पौराणिक उल्लेख के अनुसार श्रीकृष्ण आए और पांडु नदी को पार करके रुक्मिणी का हरण करके अपने साथ द्वारका ले गए और वहां विवाह करके उन्हें अपनी रानी बनाया। श्रीकृष्ण के रुक्मिणी का हरण करने को लेकर प्रचलित कथा यह है कि कुंदनपुर में उस समय परंपरा थी कि विवाह से पूर्व कुंवारी लड़कियां किले में बने गौरी मंदिर में पूजा-अर्चना के लिए जाती थीं। शिशुपाल से विवाह तय होने के बाद रुक्मिणी भी गौरी मंदिर में पूजा के लिए गई थीं, इसी दौरान श्रीकृष्ण उन्हें अपने साथ ले गए थे। कहा जाता है कि मंदिर में स्थापित मां गौरी की मूर्ति रुक्मिणी के हरण के बाद अलोप हो गई थी। इसी कारण तब से यह स्थान अलोपा देवी के नाम से प्रसिद्ध हो गया। बाद में यहां अलोपा देवी का मंदिर बनाया गया। गौरी मंदिर से पश्चिम दिशा में राजा भीष्मक ने पुरहा नदी के किनारे एक शिवलिंग की स्थापना कराई थी, जो भगवान भयानक नाथ मंदिर के नाम से बिधूना-भरथना मार्ग पर मौजूद है। मान्यता है कि अज्ञातवास के समय पांडव (युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल व सहदेव) अपनी मां कुन्ती के साथ इस मंदिर पर कुछ समय के लिए रुके थे। इस दौरान उनके द्वारा राजा भीष्मक द्वारा स्थापित शिवलिंग की पूजा अर्चना भी की गई थी। इसके चलते इसे सिद्ध शिवलिंग माना जाता है और आसपास के क्षेत्र में सावन में जलाभिषेक करने पर मनोकामना पूरी होने की मान्यता है।

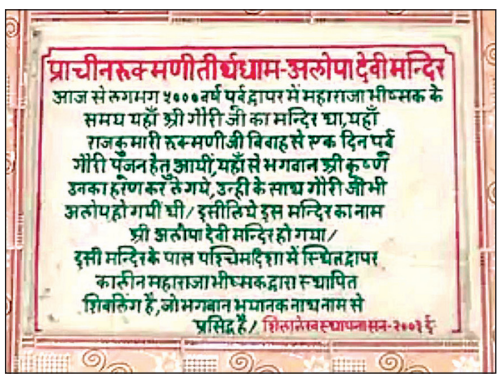

- राजा भीष्मक की राजधानी और द्वारिकाधीश की ससुराल नहीं बन पाई मथुरा और वृंदावन जैसा पौराणिक स्थल
- किला परिसर में स्थापित मां गौरी की मूर्ति रुक्मिणी हरण के बाद अलोप हो गई थी, अब यहां पर है अलोपा देवी का मंदिर
- सावन में भयानक नाथ मंदिर के शिवलिंग पर जल चढ़ाने की मान्यता, अज्ञातवास के दौरान रुके थे यहां पांडव

वर्तमान में कुदरकोट गांव जो कभी कुंडिनपुर था, बाद में कुंदनपुर के नाम से जाना गया। इतिहासकारों के अनुसार तत्कालीन कुंदनपुर कस्बे पर जब मुगलों का शासन हुआ तब इसका नाम बदलकर कुदरकोट कर दिया गया था। मुगलों ने इस स्थान का पौराणिक महत्व जानकर भौगोलिक स्थिति बदलने का प्रयास किया, लेकिन आज भी यहां राजा भीष्मक के 50 एकड़ में फैले महल के अवशेष दिखाई पड़ते हैं। आज जिस स्थान पर माध्यमिक विद्यालय स्थित है, वहां पर कभी राजा भीष्मक के महल का मुख्य प्रवेश द्वार था।

लेखक: समिधा मिश्रा

कानपुर, लेखिका पूर्व बैंक अधिकारी हैं और वर्तमान में कृपालु महाराज की शिष्या के रूप में समर्पित हैं।

बोध कथा

दया का महत्व

गौतम ऋषि ने मनुष्य के लिए आवश्यक संस्कारों का निर्देश देते हुए आठ आत्मगुणों पर बल दिया है। उन्होंने 'दया सर्वभूतेषु'- सभी मनुष्य मात्र पर दया को प्रथम स्थान प्रदान किया है। दया का भाव क्या है? दुःखीजनों का दुःख दूर करने की अभिलाषा को दया कहते हैं। बिना दया के इस संसार का संचालन सम्भव ही नहीं है। बालक का जन्म होते ही माता सर्वप्रथम उस पर दया करती है। माता की सदैव इच्छा रहती है कि मेरा बच्चा कभी भूखा न रहे, बीमार न पड़े, मुस्कुराता व साफ-स्वच्छ रहे। इसी दया से प्रेरित होकर वह स्वयं अनेक कष्ट सहकर बच्चे का लालन-पोषण करती है। गुरु यदि दया कर दे तो सामान्य शिष्य भी शास्त्र-पारंगत हो सकता है। दयावान के शासन में समस्त प्रजा अपने को सुखी स्वीकार करती है। हममें दया है, लेकिन वह सीमित है। मनुष्य ज्ञानवान अवश्य है, परन्तु सर्वज्ञ नहीं। अज्ञानवश मनुष्य किसी से राग और किसी से द्वेष करता है। इसीलिए संसारी मनुष्य की दया की सीमा होती है। ज्ञान के सन्दर्भ में शास्त्र का मत है कि मनुष्य का ज्ञान सीमित होने से ईश्वर का अस्तित्व सिद्ध हो जाता है। आकाश सीमा में बंधा हुआ नहीं है। कहीं भी हम आकाश के अभाव का अनुभव नहीं कर सकते। जहां पर परिपूर्ण ज्ञान सिद्ध हो, वहीं ईश्वर है ऐसा स्वीकार करना चाहिए । हमारी सीमित दया का भी कोई प्रतियोगी अवश्य है, जो अव्यक्त, नित्य एवं सर्वज्ञ है, वही समान रूप से सम्पूर्ण जीवों का हित करता है। लौकिक माता-पिता तो अपने परिवार पर ही दया करते हैं, परन्तु प्रभु तो सर्वत्र दया करते हैं। प्रभु सारे संसार के पिता हैं। वे भक्तों के अन्तःकरण में बैठकर अपने ज्ञानदीप से हमें अकाश दे रहे हैं। हम कष्ट आने पर दूसरों से दया चाहते हैं। आचार्य गोरेलाल जी कहते हैं" भगवान शिव ! हम जैसे याचकों की कामनाएं पूर्ण करने वाले, आपके रहते हुए यदि हम याचक - मुद्रा प्रदर्शित करते हुए दूसरे का अनुसरण करते हैं, तो हमारी जैसी ही स्थिति होगी, जैसी दूध दुहने की इच्छा से कामधेनु के रहते हुए दुलत्ती मारने वाली ऊंटनी का अनुसरण करने से होती है।" प्रभु भक्ति मात्र से सन्तुष्ट होकर कष्टों का निवारण करते हैं। भगवान की भव्य-भक्ति का आश्रय लेकर उनकी दया प्राप्त करने से ही मनुष्य-जन्म सार्थक होगा।

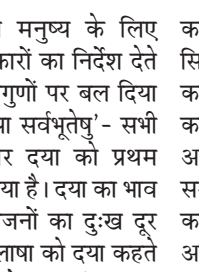

लेखक: डॉ. विजय प्रकाश त्रिपाठी, कानपुर